संविधान को जीने का अर्थ

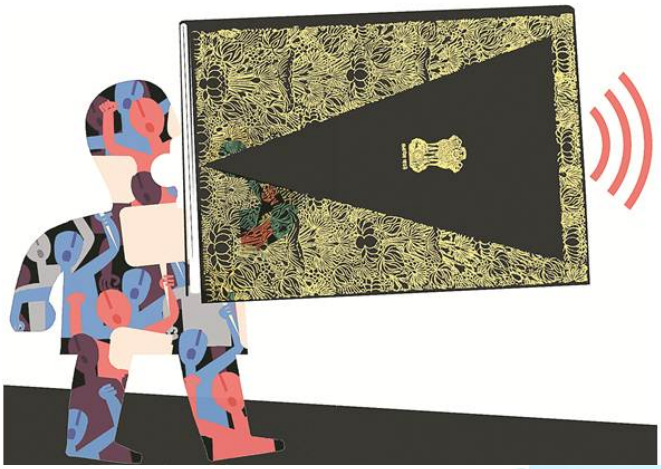

नागरिकता संशोधन विधेयक और नागरिक जनसंख्या रजिस्टर के विरोध में चल रहा देशव्यापी प्रदर्शन, लोकतांत्रिक प्रक्रिया की बहाली के लिए एक आह्यन, और सत्ता वर्ग द्वारा लोकतांत्रिक संरचनाओं का किये जा रहे विनाश के लिए रेड अलर्ट है। देश के प्रमुख विश्वविद्यालयों में निर्दयतापूर्ण हमलों के बावजूद, छात्रों ने अपना मैदान खड़ा कर लिया है और निडर होकर इस क्रूर हमले को अपनी चुनौती दी है। यह स्पष्ट है कि ऐसे हमले सरकार द्वारा प्रेरित रहे हैं। इस संदर्भ में वे सरकार के आरएसएस और एबीवीपी जैसे उसके विद्यार्थी संगठनों के आबादी का ध्रुविधारण करने और हिंसा के सहारे भय उत्पन्न करने के उसके एजेंडे को ही प्रचारित करते हैं। जिस राज्य में भी भाजपा का शासन है, वहाँ की पुलिस मौन दर्शक बनी हुई सशस्त्र भीड़ का साथ देती रही है।

जीवन के सभी क्षेत्रों से जुड़े लोगों ने अहिंसक विरोध के द्वारा आशान्वित करने वाले संवैधानिक मूल्यों के ह्यास के प्रति चिंता जताई है। यह विडंबना है कि असंतोष को दूर करने के लिए उठाए गए सरकार के निरंकुश कदमों ने संविधान के प्रति लोगों को जागरूक करने के साथ ही, बहुलवाद और धर्म निरपेक्षता के मूल्यों की रक्षा हेतु तत्पर कर दिया है।

आंबेडकर की सामाजिक समानता की अवधारणा को ध्वस्त करने तथा गांधी की अहिंसा और सविनय अवज्ञा को खंडित करने के सभी प्रयत्नों के बावजूद, हमारे युवाओं ने न्याय और संवैधानिक गारंटी को सुनिश्चित रखने के प्रयासों में ऊर्जा और संकल्प दिखाया है। पिछले छः वर्षो में जो डर था, वह हिंसा के प्रचार और उस पर भारतीयों की बड़े पैमाने पर चुप्पी साधने का डर था। आज हम जो देख रहे हैं, वह इस चुप्पी के टूटने की शुरूआत है। जिस देश में हर तरह के संस्थान को खोखला किया जा रहा है, उस देश में ऐसे प्रदर्शनों का होना ऐसी घटना है, जो बदलाव के कुचक्र की आशंका को खत्म कर देती है।

इन विरोध प्रदर्शनों ने अभिव्यक्ति पर लगी पाबंदी और असहायता को खत्म किया है। विभाजनकारी बयानबाजी और राज्य अनुमोदित पदोन्नति वाली नीतियों की आलोचना और विरोध किया है। इन नौजवानों के असाधारण साहस को देखने और सराहने वाले लाखों लोगों के मन से भय की चादर उतरने लगी है।

निःसंदेह असंतोष की कीमत महंगी पडी है। इसके परिणामस्वरूप शारीरिक हानि हुई है, और निर्दोष मारे गए हैं। लेकिन इसने बगावत के प्रवाह पर प्रभाव नहीं पड़ने दिया है।

हिंसा तो भयातुर का कवच हुआ करती है। इसका निरंतर प्रयोग यह प्रदर्शित करता है कि सीएए की असंवैधानिकता और अन्याय के लिए सरकार के पास कोई तार्किक प्रमाण नहीं है। धर्म के आधार पर लोगों में भेदभाव करना संविधान सम्मत नहीं है। शांतिपूर्ण विरोधों पर हिंसात्मक दमन करने से अनेक मूलभूत प्रश्न उठ खड़े होते हैं। उस पर भी अनेक तर्क दिए जा रहे हैं। कानून-व्यवस्था के नाम पर राज्य प्रवर्तित हिंसा सदैव ही संदिग्ध रही है। हिंसा करने का भी अपना तर्क होता है। एक कमजोर शासन ही किसी विवाद को निपटाने के लिए हिंसा का मार्ग अपनाता है।

भय का परिणाम देशवासियों की हैरान करने वाली स्थिति के रूप में सामने आ रहा है। वे जानते हैं कि धारा 370 को समाप्त करके, जम्मू-कश्मीर को सीधे केंद्र के नियंत्रण में लाना एक असंवेदनशील, भेदभावपूर्ण नीति का सोचा-समझा कदम है। इसका उद्देश्य अलगाव और घृणा के बीज रोपना है।

प्रश्नों और असंतोष के लिए स्थान को खत्म करके हम सभी प्रकार की प्रगति को रोक रहे हैं। हम आर्थिक और विकासशील नीतियों की राह को अवरूद्ध कर रहे हैं।

किसी भी समाज में ज्ञान और सृजनात्मकता का केंद्र उसके विश्वविद्यालय होते हैं। वे हमारे भविष्य के नैतिक लोकतांत्रिक ढांचे का निर्माण करते हैं। आलोचनात्मक सोच की कठोरता के आधार पर वे सत्ता से सच बोलने की क्षमता को प्रोत्साहित करते हैं। तार्किकता और वाद-विवाद के स्थान को नष्ट करके क्या हम भारत के ही विचार का नाश नहीं कर रहे हैं ? जिस संवैधानिक आधार पर हमने इस देश का निर्माण किया है, और जिस शांति के साथ हमने विभिन्न संस्कृतियों में सामंजस्य का प्रयत्न किया है, उसे जानबूझकर कुचला जा रहा है। अगर हम इसी राह पर चलते रहे, तो भारत का अस्तित्व ही समाप्त हो जाएगा। अपने नौजवानों के साथ क्रूरतापूर्ण व्यवहार करके हम स्वतंत्रता के सत्व का माखौल बना रहे हैं। हम उनके स्वप्नों को ध्वस्त कर रहे हैं। क्या हम विरासत के रूप में ऐसा ही भविष्य छोड़ कर जाना चाहते हैं ?

शेष भारत को चाहिए कि देश में शांति और समानता के लिए इस आंदोलन को आगे बढ़ाए। यह संविधान को कमजोर करने वालों के साथ असहयोग का आंदोलन हो। हमने सत्याग्रह जैसे असहयोग आंदोलन के द्वारा एक बड़ी औपनिवेशिक शक्ति को वापस भेज दिया था। हममें से समानता में विश्वास रखने वाले सभी लोगों को प्रपत्रों को भरने और दस्तावेजों को पेश करने से पीछे हट जाना चाहिए।

इस आंदोलन को इतिहास में याद किया जाएगा।

'द इंडियन एक्सप्रेस' में प्रकाशित अरूणा राय बेजवदा विल्सन और टी एम कृष्णा के लेख पर आधारित। 10 जनवरी, 2020